एन.के.एस.

पुनरीक्षण अपराधी।

माननीय न्यायाधीश प्रीतम सिंह के समक्ष,

राज्य, - *याचिकाकर्ता*

बनाम

शंकर सिंह के पुत्र फुला - *उत्तरदाता।*

1975 के आपराधिक संशोधन संख्या 62 की रिपोर्ट

1 दिसंबर, 1975

दंड प्रक्रिया संहिता (1974 का 2) - धारा 209, 228 (1) (ए) और 484 (2) परंतुक - सत्र न्यायालय द्वारा सुनवाई योग्य अपराध के लिए लंबित पुरानी संहिता के तहत प्रतिबद्ध कार्यवाही- ऐसी लंबित अवधि के दौरान लागू होने वाली नई संहिता - नई संहिता के तहत मजिस्ट्रेट द्वारा विचारणीय अपराध - मजिस्ट्रेट - क्या अपराध का स्वयं मुकदमा चलाना चाहिए - नई संहिता के लागू होने के बाद आरोपी को करने वाले मजिस्ट्रेट - सत्र न्यायाधीश - क्या मामले को धारा 228 (एल) (ए) के तहत मजिस्ट्रेट को स्थानांतरित करना चाहिए।

यह माना गया कि जब सत्र न्यायालय द्वारा सुनवाई योग्य अपराध के लिए दंड प्रक्रिया संहिता 1898 के तहत दंडात्मक कार्यवाही न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष उस तारीख को लंबित थी, जब नई दंड प्रक्रिया संहिता 1973 लागू हुई थी, तो मजिस्ट्रेट को धारा 484 (2) (ए) के परंतुक के आधार पर नई संहिता के प्रावधानों के अनुसार उससे निपटना और निपटान करना चाहिए। यदि, नई संहिता के प्रावधानों के अनुसार, अपराध विशेष रूप से सत्र न्यायालय द्वारा सुनवाई योग्य है, तो आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 209 के तहत, मजिस्ट्रेट को किसी भी सबूत को दर्ज किए बिना सत्र न्यायालय में मुकदमे के लिए मामला करना चाहिए। हालांकि, यदि नई संहिता के तहत अपराध विशेष रूप से सत्र न्यायालय द्वारा सुनवाई योग्य नहीं है और मजिस्ट्रेट द्वारा सुनवाई योग्य है, तो प्रतिबद्धता के लिए कोई आदेश पारित नहीं किया जा सकता है और मजिस्ट्रेट को स्वयं मामले की सुनवाई के लिए आगे बढ़ना चाहिए। हालांकि, यदि कोई न्यायिक मजिस्ट्रेट किसी अपराध के लिए आरोपी बनाता है, जो विशेष रूप से सत्र न्यायालय द्वारा सुनवाई योग्य नहीं है, तो सत्र न्यायाधीश को धारा 228 (एल) (ए) के तहत पारित आदेश द्वारा आरोप तय करना चाहिए। दंड प्रक्रिया संहिता, मामले को पुलिस रिपोर्ट पर स्थापित वारंट मामले के रूप में कानून के अनुसार सुनवाई के लिए मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट की अदालत में स्थानांतरित करना।

(पैरा 8)

हिसार के अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश श्री आरएल लांबा द्वारा नई दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 395 (2) के तहत 16 मई, 1975 के अपने आदेश के तहत श्री एच. एस. कथूरिया, जे.एम.आई.सी., सिरसा के दिनांक 18 मई के आदेश से उत्पन्न निम्नलिखित बिंदुओं पर कानून निर्धारित करने के लिए मामला दर्ज किया गया है। 1974 में भारतीय शस्त्र अधिनियम, 1950 की धारा 27 के साथ धारा 324 और 337 आईपीसी के तहत आरोपी को दोषी ठहराया गया। :—

(१) क्या, मामले के विशेष तथ्यों में, सत्र न्यायालय के लिए मामले की प्रतिबद्धता वैध या अमान्य है।
(२) क्या प्रथम श्रेणी न्यायिक मजिस्ट्रेट कोई अनियमितता या अवैधता करेगा, यदि वह मामला करने के बजाय आरोप तय करने और आरोपी पर धारा 27 शस्त्र अधिनियम के तहत अपराध के लिए मुकदमा चलाने का फैसला करता है, जिसे वह अब नई संहिता के तहत मुकदमा चलाने के लिए सक्षम है।
(३) क्या सत्र न्यायालय को एक औपचारिक घोषणा दर्ज करनी चाहिए कि मामले की प्रतिबद्धता अवैध है, जब प्रतिबद्धता पहले बताए गए कारणों के लिए कानून के अनुसार नहीं है।
(४) क्या सत्र न्यायालय अवैध अपराध की अनदेखी कर सकता है और मामले को न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी को इस निर्देश के साथ वापस कर सकता है कि उसे आरोप तय करने चाहिए और आरोपी पर स्वयं मुकदमा चलाना चाहिए।
(५) इस आदेश में व्यक्त किए गए विचार नई संहिता के अनुरूप हैं या नहीं।

राजेश चौधरी, वकील, राज्य के लिए।

प्रतिवादी की ओर से एडवोकेट डी. एस. बाली।

निर्णय

माननीय न्यायमूर्ति पी. एस. पट्टर, (1) हिसार के अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश श्री आरएल लांबा ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 395(2) के तहत अपने दिनांक 16 मई, 1975 के आदेश में उल्लिखित कानून के बिन्दुओं पर निर्णय लेने के लिए यह संदर्भ दिया है।

(2) इस मामले के तथ्य यह हैं कि फूला आरोपी को भारतीय दंड संहिता की धारा 337 और 324 और भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 27 के तहत दर्ज प्रथम सूचना रिपोर्ट संख्या 236 के मामले में पुलिस स्टेशन, रानिया, तहसील और जिला सिरसा की पुलिस द्वारा गिरफ्तार किया गया था। आरोप है कि 10 अक्टूबर 1973 को फिरोजाबाद निवासी किशन, बाज सिंह और फूला आरोपी किशन के घर पर शराब ले जा रहे थे। दोपहर करीब दो बजे जब वे खाना खा रहे थे तो किशन और फूला आरोपियों के बीच विवाद हो गया और उन्होंने एक-दूसरे पर वार किया और थप्पड़ मारे। किशन आरोपी डर के मारे रेशम सिंह शिकायतकर्ता के घर में घुस गया, फूला आरोपी ने हाथ में लाइसेंसी बंदूक लेकर उसका पीछा किया। उसने रेशम सिंह को उसके घर से किशन को बाहर निकालने के लिए गाली दी। उसने बंदूक से एक गोली भी चलाई और कुछ छर्रे रेशम सिंह के दाहिने हाथ पर लगे। रेशम सिंह द्वारा बनाई गई रिपोर्ट पर यह मामला दर्ज किया गया। मामले की जांच के बाद, फूला आरोपी का भारतीय दंड संहिता की धारा 337 और 324 और शस्त्र अधिनियम की धारा 27 के तहत चालान किया गया था। अभियुक्तों के वकील ने न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, सिरसा के समक्ष दलील दी कि 1 अप्रैल, 1974 से दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के लागू होने के बाद, शस्त्र अधिनियम की धारा 27 के तहत अपराध भी विशेष रूप से न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा सुनवाई योग्य हो गया है और इसलिए, इस मामले की सुनवाई उस अदालत द्वारा की जानी चाहिए। इस मामले में चालान 20 मार्च, 1974 को उनके न्यायालय में दायर किया गया था और माना जाता है कि उस समय शस्त्र अधिनियम की धारा 27 के तहत अपराध विशेष रूप से सत्र न्यायालय द्वारा सुनवाई योग्य था। पक्षों के वकीलों को सुनने के बाद, न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, सिरसा ने 18 मई, 1974 के अपने आदेश में कहा कि भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 27 के तहत अपराध विशेष रूप से सत्र

न्यायालय द्वारा सुनवाई योग्य है और इसलिए, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 209 के प्रावधानों के साथ धारा 484 (2) के मद्देनजर, 1973 में, उन्होंने फूला को भारतीय दंड संहिता की धारा 324 और 337 और शस्त्र अधिनियम की धारा 27 के तहत सत्र न्यायालय में अपने मुकदमे का सामना करने के लिए दोषी ठहराया।

(3) जब मामला हिसार के अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश श्री आरएल लांबा के समक्ष आरोप तय करने के लिए आया, तो लोक अभियोजक द्वारा एक आपत्ति उठाई गई कि मामले को न्यायिक मजिस्ट्रेट की अदालत में वापस भेजा जा सकता है क्योंकि सभी अपराध अनन्य रूप से उनके द्वारा सुनवाई योग्य थे। हालांकि, आरोपी के वकील ने इस आपत्ति का विरोध किया। पक्षों के वकीलों को सुनने के बाद, अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि मामले की प्रतिबद्धता के आदेश को रद्द करने के लिए नई दंड प्रक्रिया संहिता में कोई विशिष्ट प्रावधान नहीं हैं और उनकी राय में प्रतिबद्धता का आदेश उचित नहीं था, लेकिन चूंकि मामले में शामिल कानून के बिंदु पर कोई आधिकारिक घोषणा नहीं थी। वह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 395(2) के अधीन उच्च न्यायालय के निर्णय के लिए विधि के निम्नलिखित प्रश्नों को संदर्भित करता है -

(1) क्या, मामले के विशेष तथ्यों में, सत्र न्यायालय के लिए मामले की प्रतिबद्धता वैध या अमान्य है।

(2) क्या न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, कोई अनियमितता या अवैधता करेगा, यदि वह मामला करने के बजाय आरोप तय करने का निर्णय लेता है, और अभियुक्त पर शस्त्र अधिनियम की धारा 27 के तहत अपराध के लिए मुकदमा चलाने का निर्णय लेता है, जिसे वह अब नई संहिता के तहत मुकदमा चलाने के लिए सक्षम है?

(3) क्या सत्र न्यायालय को एक औपचारिक घोषणा दर्ज करनी चाहिए कि मामले की प्रतिबद्धता अवैध है, जब प्रतिबद्धता पहले बताए गए कारणों के लिए कानून के अनुसार नहीं है?

(4) क्या सत्र न्यायालय अवैध प्रतिबद्धता की उपेक्षा कर सकता है और मामले को न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी को इस निर्देश के साथ वापस कर सकता है कि उसे आरोप तय करना चाहिए और आरोपी पर स्वयं मुकदमा चलाना चाहिए?

(5) क्या इस आदेश में व्यक्त किए गए विचार नई संहिता के अनुसार हैं या नहीं?

राज्य के वकील और फूला आरोपियों के वकील को भी नोटिस दिए गए थे और दलीलें सुनी गई हैं।

(4) यह सच है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 337 और 324 के अधीन अपराध ों की सुनवाई अनन्य रूप से न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी द्वारा की जा सकती है। यह निर्विवाद है कि 1 अप्रैल, 1974 से प्रभावी नई दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के लागू होने से पहले, शस्त्र अधिनियम की धारा 27 के तहत अपराध विशेष रूप से सत्र न्यायालय द्वारा सुनवाई योग्य था। हालांकि, नई दंड प्रक्रिया संहिता के लागू होने के बाद, शस्त्र अधिनियम की धारा 27 के तहत अपराध अब न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी द्वारा सुनवाई योग्य है। इस मामले में आरोपी के खिलाफ 20 मार्च, 1974 को न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, सिरसा की अदालत में चालान दायर किया गया था। मैंने दंड प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों को नीचे दिया है, जो इस मामले के निर्णय के लिए प्रासंगिक हैं -

धारा 484

(2) ऐसे निरसन के बावजूद, -

(क) यदि इस संहिता के लागू होने की तारीख से ठीक पहले कोई अपील, आवेदन, विचारण जांच या जांच लंबित है, तो ऐसी अपील, आवेदन, विचारण, चोट या जांच, जैसा भी मामला हो, दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 के उपबंधों के अनुसार निपटाया जाएगा, जारी रखा जाएगा, धारण किया जाएगा या किया जाएगा, जैसा भी मामला हो, रखा जाएगा या किया जाएगा, जैसा कि इस तरह के प्रारंभ से ठीक पहले लागू था, (इसके बाद पुरानी संहिता के रूप में जाना जाता है), जैसे कि यह संहिता लागू नहीं हुई थी:

परन्तु पुरानी संहिता के अध्याय XVIII के अधीन प्रत्येक जांच, जो इस संहिता के प्रारंभ में लंबित है, इस संहिता के उपबंधों के अनुसार निपटाई जाएगी और उसका निपटान किया जाएगा।

धारा 209

जब पुलिस रिपोर्ट या अन्यथा स्थापित किसी मामले में, अभियुक्त मजिस्ट्रेट के समक्ष उपस्थित होता है या लाया जाता है और मजिस्ट्रेट को यह प्रतीत होता है कि अपराध विशेष रूप से सत्र न्यायालय द्वारा सुनवाई योग्य है, तो वह-

(ए) मामले को सत्र न्यायालय को सौंपना;

(ख) जमानत से संबंधित इस संहिता के उपबंधों के अधीन रहते हुए, अभियुक्त को विचारण के दौरान और सुनवाई समाप्त होने तक हिरासत में भेजना;

(ग) उस न्यायालय को मामले का रिकॉर्ड और दस्तावेज और लेख, यदि कोई हों, भेजें, जिन्हें साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत किया जाना है;

(घ) लोक अभियोजक को सत्र न्यायालय को मामले की वचनबद्धता के बारे में सूचित करना।

(5) यह सच है कि पुरानी संहिता के अध्याय XVIII के तहत इस मामले में प्रतिबद्धता की कार्यवाही 1 अप्रैल, 1974 को न्यायिक मजिस्ट्रेट की अदालत में लंबित थी, जब नई दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 लागू हुई थी। इसलिए, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 484 (2) के खंड (ए) के परंतुक के अनुसार, इन कार्यवाहियों को नई संहिता के प्रावधानों के अनुसार निपटाया और निपटाया जाना था। नई दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 209 में सत्र न्यायालय में मामलों की प्रतिबद्धता की प्रक्रिया निर्धारित की गई है, जब अपराध अनन्य रूप से उसके द्वारा सुनवाई योग्य है। नई दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 209 और धारा 484 (2) (ए) के परंतुक के संयुक्त पठन से पता चलता है कि यदि कोई अपराध विशेष रूप से सत्र न्यायालय द्वारा सुनवाई योग्य है तो मजिस्ट्रेट को उस अदालत को मामला सौंपना चाहिए। लेकिन यदि 1 अप्रैल, 1974 के बाद के अपराध की सुनवाई सत्र न्यायालय द्वारा अनन्य रूप से नहीं की जा सकती है और उस पर प्रथम श्रेणी के मजिस्ट्रेट द्वारा सुनवाई की जा सकती है, तो उसे स्वयं मामले की सुनवाई करनी चाहिए और प्रतिबद्धता के लिए कोई आदेश पारित नहीं किया जा सकता है।

(6) तत्काल मामले में, हालांकि चालान 20 मार्च, 1974 को दायर किया गया था, लेकिन प्रतिबद्धता का आदेश 18 मई, 1974 को पारित किया गया था। यह स्वीकार किया जाता है कि 18 मई, 1974 को जब

सत्र न्यायालय में विचारण के लिए इस मामले की प्रतिबद्धता का आदेश पारित किया गया था, तो शस्त्र अधिनियम की धारा 27 के तहत अपराध विशेष रूप से सत्र न्यायालय द्वारा सुनवाई योग्य नहीं था और यह अपराध न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी द्वारा सुनवाई योग्य था। न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा पारित प्रतिबद्धता का आदेश अमान्य है और उच्च न्यायालय द्वारा आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत रद्द किया जा सकता है। इसके अलावा, यदि कोई ऐसा मामला जो विशेष रूप से सत्र न्यायालय द्वारा सुनवाई योग्य नहीं है, किया गया है, तो सत्र न्यायाधीश / अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, अभियुक्त के खिलाफ आरोप तय कर सकते हैं, और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 228 (1) (ए) के तहत पारित आदेश द्वारा, मामले को मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट को परीक्षण के लिए स्थानांतरित कर सकते हैं। जो तब पुलिस रिपोर्ट पर वारंट मामलों के परीक्षण के लिए प्रक्रिया के अनुसार मामले की सुनवाई करेगा।

(7) अभियुक्तों के विद्वान वकील श्री डी एस बाली ने सकाती नारायण बनाम भसानी लच्छू और एक अन्य (1) पर भरोसा किया, जिसमें उड़ीसा उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने निम्नानुसार निर्णय दिया: -

"जहां दंड संहिता की धारा 487 के तहत अपराध में दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 के तहत दंडात्मक कार्यवाही 1 अप्रैल, 1974 को मजिस्ट्रेट के समक्ष लंबित थी, जब नई आपराधिक प्रक्रिया संहिता, 1973 लागू हुई थी, मजिस्ट्रेट को धारा 484 (ए) परंतुक के आधार पर बिना किसी सबूत के धारा 209 के तहत सत्र न्यायाधीश को मामला प्रस्तुत करना चाहिए क्योंकि धारा 467 दंड संहिता के तहत अपराध विशेष रूप से अदालत द्वारा सुनवाई योग्य है। सत्रों की संख्या".

पटना उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने आद्या प्रसाद और अन्य बनाम राजेंद्र महतो (2) मामले में भी यही विचार व्यक्त किया था। उड़ीसा उच्च न्यायालय के मामले में, भारतीय दंड संहिता की धारा 467 के तहत अपराध की सुनवाई 1 अप्रैल, 1974 से पहले सत्र न्यायालय द्वारा अनन्य रूप से की जा सकती थी, लेकिन प्रतिबद्धता का आदेश 1 अप्रैल, 1974 के बाद पारित किया गया था। इसी प्रकार, पटना उच्च न्यायालय के मामले में, भारतीय दंड संहिता की धारा 386 के तहत अपराध की सुनवाई 1 अप्रैल, 1974 से पहले सत्र न्यायालय द्वारा की गई थी और प्रतिबद्धता का आदेश इस तारीख के बाद पारित किया गया था। पूरे सम्मान के साथ, मैं इन निर्णयों में व्यक्त किए गए विचारों से सहमत नहीं हूं। इन दोनों मामलों में, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 484 (2) (ए) के परंतुक के आधार पर, न्यायिक मजिस्ट्रेट को बिना किसी सबूत के आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 209 के तहत मुकदमे के लिए सत्र न्यायाधीश को मामला सौंपना चाहिए क्योंकि अपराध केवल उक्त न्यायालय द्वारा सुनवाई योग्य था।

(8) इसलिए, कानूनी स्थिति यह है कि जब सत्र न्यायालय द्वारा विचारणीय अपराध के लिए दंड प्रक्रिया संहिता के तहत दंडात्मक कार्यवाही की जाती है। 1898 के मामले 1 अप्रैल, 1974 को न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष लंबित थे, जब नई दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 लागू हुई थी, मजिस्ट्रेट को धारा 484 (2) (क) के परंतुक के आधार पर नई संहिता के प्रावधानों के अनुसार इनका निपटान और निपटान करना होगा। यदि, नई संहिता के प्रावधानों के अनुसार, अपराध विशेष रूप से सत्र न्यायालय द्वारा सुनवाई योग्य है, तो आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 209 के तहत, मजिस्ट्रेट को किसी भी सबूत को दर्ज किए बिना सत्र न्यायालय में मुकदमे के लिए मामला करना चाहिए। हालांकि, यदि नई संहिता के तहत अपराध विशेष रूप से सत्र न्यायालय द्वारा सुनवाई योग्य नहीं है और मजिस्ट्रेट द्वारा सुनवाई योग्य है, तो प्रतिबद्धता के लिए कोई आदेश पारित नहीं किया जा सकता है और मजिस्ट्रेट को स्वयं मामले की सुनवाई के लिए आगे बढ़ना चाहिए। तथापि, यदि कोई न्यायिक मजिस्ट्रेट किसी ऐसे अपराध के लिए अभियुक्त करता है, जो विशेष रूप से सत्र न्यायालय द्वारा सुनवाई योग्य नहीं है, तो सत्र/अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश को आरोप तय करना चाहिए और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 228 (1) (ए) के तहत पारित आदेश द्वारा, मामले को पुलिस रिपोर्ट पर स्थापित वारंट मामले के रूप में कानून के अनुसार सुनवाई के लिए मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट की अदालत में स्थानांतरित करना चाहिए।

(9) उपर्युक्त कारणों से, यह माना जाता है कि इस मामले में न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, सिरसा द्वारा पारित दिनांक 18 मई, 1974 का आदेश अमान्य है और इसे रद्द किया जाता है। मामले को सुनवाई के लिए न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी सिरसा के पास वापस भेजने का आदेश दिया जाता है।

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

वीरेंद्र कुमार
प्रीक्षिशु न्यायिक अधिकारी
चंडीगढ़